श्रीगणेशशतकम्

Shri-Ganesh-Shatkam

प्रणेताऽनुवादकश्च – हिमाँशुगौडः

Author and Translator: Himanshu Gaur

ISBN -978-81-943558-5-4

प्रथम-संस्करणम्

First Edition

200 प्रतयः

200 Copes

।। श्रीगणेशमहिमख्यापकं शतश्लोकात्मकं काव्यम् ।।

Poetry of hundred verses expressing reverence and gratitude for father.



Publisher:

True Humanity Foundation

Non-Governmental Organization

।।। श्रीगणेशशतकम् ।।।



दिव्याश्च यस्य विभवाश्च समुद्भवन्ति
चन्द्राभरक्तवसनस्य पुराणसक्ते
तं श्रीविशेषगणनायकसर्वसम्भृल्-
लोकाशभासभरणं शरणं प्रपद्ये ।।१।।

जो सभी देवताओं में विशिष्ट हैं, गणों के स्वामी हैं, सभी का भरण-पोषण करते हैं। संसार में आशा रूपी प्रकाश भरने वाले हैं, चन्द्रमा के समान आभा वाले हैं, और जो लाल वस्त्र पहनते हैं, ऐसे श्रीगणेश जी, पुराणादि कथाओं के द्वारा जो भक्त उनकी अर्चना करते हैं, ऐसे लोगों के लिए दिव्य सम्पत्ति प्रदान करते हैं मैं भी आज उन गणेशजी की ही शरण में आया हूं ।।१।।

श्रीदो यः परिपालयेत्त्रिभुवनं लोकैकहेतुर्विभुः
सर्वेषां हृदयेषु संवसति यस्सौख्याश्रयश्चात्मसु
नित्यस्सर्वगुणाब्धिरच्युतपदो विघ्नादिनाशङ्करः
दुःखामग्ननृणां शुभङ्करवपुश्श्रीहस्तिनाथो जयेत् ।।२।।

जो सभी मनुष्यों के लिए लक्ष्मी प्रदान करने वाले हैं, इन तीनो लोकों का पालन पोषण करते हैं, इस ब्रह्माण्ड के निर्माण का जो एकमात्र कारण है, और स्वयं प्रभु हैं। सभी के हृदय में वास करते हैं, आत्माओं (आत्मवत्सु वा भक्तों के शरीरों में) में सुख का आश्रय हैं , वे गणेश भगवान् नित्य हैं, सभी गुणों के समुद्र हैं। वे अच्युत हैं (गणेश के पद का कभी विनाश नहीं होता), और वह भगवान् विघ्नादि का विनाश करते हैं, दुखों में डूबे हुए लोगों को वही सुख प्रदान करते हैं, शुभदायक उनका स्वरूप है, ऐसे हस्तिनाथ भगवान् की जय हो ।।२।।

यो वै सर्वजगत्तमांसि हरति ब्रह्माण्डभासोंऽशुमान्
रात्रौ यश्च नृणां मनांसि हरति श्रीमद्धिमांशुर्द्विजः
तौ द्वौ यस्य कृपास्यलास्यकरुणत्त्वेनैव सम्भासितौ
सोऽस्माकं गणनाथविघ्नहरणस्सम्पत्तिकारी भवेत् ।।३।।

जो समस्त लोकों के अंधेरों को हर लेते हैं, इस ब्रह्माण्ड के भासमान स्वरूप हैं , ऐसे अंशुमान् भगवान् सूर्य, तथा जो रात्रि में अपनी सुन्दर छटा से लोगों का मन हर लेते हैं, ऐसे भगवान् चन्द्र। जिन भगवान् गणेश के कृपामय मुख की सुन्दरता और करुणा से ही यह दोनों सूर्य और चंद्रमा चमक रहे हैं (प्रकाशमान हैं

) ऐसे गणनाथ, विघ्नों का नाश करने वाले भगवान् गणेश हमें भी सम्पत्ति प्रदान करें, हम उनको नमस्कार करते हैं ।।३।।

संसारः कथमेव तिष्ठति कथं जीवन्ति जीवा इह
नानाचित्रविचित्रदृश्यलसितं चेदं जगद्वर्तते
का माया कथमेव सम्भ्रममतिर्दुःखं च सौख्यं कुतस्-
सर्वेषामिदमेकमुत्तरमहो श्रीमद्गणेशेच्छया ।।४।।

यह संसार कैसे टिका हुआ है? कैसे इसमें ये सारे प्राणी जीवित हैं? कैसे यह सारा संसार अनेक प्रकार के रंग-बिरंगे दृश्यों से सजा हुआ है? संसार में ये क्या माया फैली हुई है? मनुष्य कैसे विभ्रान्त होकर घूम रहा है? दुख और सुख यह सब क्या है ? कहां से प्राप्त होता है? तो इसका एक ही उत्तर है - श्री गणेश भगवान् की (इच्छा) से ही यह सब कुछ है ।।४।।

मृत्युं वा लभते कथं हि मनुजो जायेत कस्याज्ञया
सौख्यापत्तिसमन्वितं च निखिलं जीवेज्जनो जीवनम्
मोक्षो बन्ध उताऽस्य केन भवति श्रीदश्च कोऽस्त्यस्य वै
सर्वेषामिदमेकमुत्तरमहो श्रीमद्गणेशेच्छया ।।५।।

मनुष्य की मृत्यु कैसे होती है? वह जन्म कैसे लेता है? किस की आज्ञा से लेता है? मनुष्य सम्पत्ति और विपत्ति संयुक्त सारे जीवन को कैसे जीता है? प्राणी का बन्धन और मोक्ष किसके द्वारा सम्भव है? प्राणियों को शोभा और सम्पत्ति कौन देने वाला है? तो इन सारी बातों का एक ही उत्तर है - श्रीगणेशजी की इच्छा से ही ये सब कुछ होता है ।।५।।

केनेमे ह्यसुरास्सुराः प्रतिदिनं वा युध्यमाना मिथः
पृथ्व्यां वाऽपि परस्परं नृपतयस्सामान्यजानाश्च वा
मूर्खत्त्वेन समस्तसृष्टिजनता कस्याज्ञया भ्राम्यति
सर्वेषामिदमेकमुत्तरमहो श्रीमद्गणेशाज्ञया ।।६।।

किससे प्रेरित देवता और राक्षस क्यों आपस में लड़ते रहते हैं?[1] इस धरती पर आपस में राजाओं का, और सामान्य लोगों का आपस में क्यों युद्ध होता रहता है? यह संसार की सारी जनता, वास्तविक बुद्धिमानी को छोड़ मूर्खतापूर्ण होकर किस की आज्ञा से भ्रमण करती है?[2] तो इन सब बातों का एक ही उत्तर है - श्रीमद् गणेशजी की आज्ञा (इच्छा) से ।।६।।

को वै सर्वसुखं ददाति सुरराट् को वै जगद्रक्षकः
कश्चादिः प्रथमश्च पूज्यभगवान् कः पाति सर्वाः क्रियाः
विघ्नध्वंसकरश्शुभप्रदवपुः को वै भवात्तारयेत्
सर्वेषामिदमेकमुत्तरमहो श्रीमद्गणेशस्स वै ।।७।।

देवताओं में ऐसा कौन है, जो जगत् की रक्षा करता है? सभी देवताओं में प्रथम पूज्य भगवान् कौनसे हैं ? वह कौन है, जो प्राणियों की यज्ञादि सभी क्रियाओं की रक्षा करते हैं? ऐसे कौन हैं, जो महाविघ्नों को भी अपने शुभता-सम्पन्न दर्शनों से नष्ट कर देते हैं? ऐसे कौन हैं, जो इस संसार-सागर से पार उतारते हैं? इन सब बातों का एक ही उत्तर है - वे श्रीगणेशजी हैं ।।७।।

यस्मिंश्चाऽपि निपत्य भीभृति जनो बद्धो भवेत्सर्वथा
वैराग्यादिसमस्तबोधजनितां चर्यां त्यजेच्चेत्पुमान्
भोगं मोक्षमुभौ ददाति मतिराड् यो दन्तिराजो विभुः
श्रद्धाभक्तिसमन्वितो भव जन श्रीमद्गणेशे सदा ।।८।।

यह संसार तो इतना भयानक है, कि इसमें गिरकर अच्छे-अच्छे मानव भी बंधन में बंध जाते हैं । वैराग्य आदि शास्त्र का समस्त बोध और उससे उत्पन्न अपने आचरण को भी मनुष्य त्याग देता है । इसलिए संभल जाओ ! और जो भोग और मोक्ष दोनों को देते हैं, ऐसे महान् बुद्धिमान् और दन्तिराज, सर्वव्यापी गणेशजी में सदा श्रद्धा और भक्ति धारण करो ।।।८।।

हे विघ्नेश! दयार्णव! श्रुतिसृतां लभ्योऽस्यहो योगिनां
मादृक्पुण्यविहीनशास्त्ररहितानां नास्ति काचिद्गतिः
त्वं सर्वेशगुणेशसौख्यनिलयश्श्रीदो जगद्धारको
बालं त्वच्चरणागतं शरणद श्रीदन्तिराट् पालय ।।९।।

हे विघ्नेश आप दया के सागर हैं ! वैदिक और योगियों द्वारा भी आप प्राप्त किए जाते हैं, किन्तु मेरे जैसे पुण्यहीन तथा शास्त्रहीन मनुष्यों की कोई गति नहीं ! पर तुम सभी के स्वामी, गुणों के देवता और सुख-स्वरूप हो, श्रीप्रद हो, और जगत् को धारण करने वाले हो, इसलिए हे दन्तिराज, अपने चरणों की शरण में आए हुए भक्तों का पालन करो ।।९।।

कीर्तिर्वा धनमस्तु सौख्यसरणीर्नित्यं तनुध्वं नराः
गेहे भक्तिभरं नियोजनमपि श्रीविष्णुसङ्कीर्तनम्
सर्वं चिन्तितसन्मनोरथगणान्नूनं लभध्वं यदि
विघ्नध्वंसगणेशदेवदयया दृष्टाश्च चेत्पुण्यगाः[3] ।।१०।।

कीर्ति, धन, सुख-सुविधाएं, खूब प्राप्त करो ! अपने घर में भजन सङ्कीर्तन का आयोजन रखो ! अपने सोचे हुए सभी मनोरथों को निश्चित ही प्राप्त करो ! यदि विघ्नों का ध्वंस करने वाले गणेश भगवान् की दया-दृष्टि से तुम पुण्यशाली किए जाते हो तो ।।१०।।

यश्श्रीणां सुनिधिर्विधिश्च जगतां स्वस्येच्छया चालयेत्
विद्युद्दामचमत्कृतं क्षणभवं सन्दर्शयेन्मादृशे
रूपं यत्परमैकनिष्ठमनसा ध्यायन्ति योगाश्रिताः
लोकात्पश्यति सौख्यदुःखनिभृतं यो मादृशां जीवनम् ।।११।।

वे गणेश भगवान् तो सम्पत्तियों की एकमात्र निधि हैं ! इस संसार की विधियों को अपनी इच्छा से वही चलाते हैं ! और कभी-कभी मुझ जैसे लोगों को विद्युत् के समान अपना चमत्कारी रूप क्षण-भर के लिए दिखाते हैं ! जिस रूप का बहुत ही निष्ठापूर्ण मन से योगी-जन ध्यान करते हैं, और वे गणेश भगवान ही अपने गणेश लोक से इस सारे संसारियों के तथा मुझ जैसे लोगों के सुख-दुख से भरे हुए जीवन को देखते रहते हैं ।।११।।

यो वै धूम्रजटाधरस्य तनयो गौरीसुतो यः प्रभुः
विघ्नध्वंसकरश्च यश्च भगवान् आपद्गतान् रक्षति
दारिद्र्यं दहति क्षणात् स्तुतिकृतां श्रद्धाभृतां वै नृणां
तं श्रौतप्रियलक्षितादिपुरुषं शम्भुप्रियं भावये[4] ।।१२।।

जिनकी धुँएं जैसे रंग की जटाएँ हैं, ऐसे भगवान् शिव, के जो पुत्र हैं ! गौरी माता के प्रिय जो भगवान हैं, विघ्नों का नाश करने वाले. आपत्तियों से रक्षा करने वाले. अपने श्रद्धा-भक्ति पूर्वक स्तुति करने वाले लोगों की दरिद्रता को एक क्षण में जला देने वाले, वे भगवान्, वेदपुरुषों द्वारा भी आदिपुरुष के रूप में लक्षित किए गए हैं, और वही शिव के प्यारे हैं, मैं उनका ही आज चिन्तन कर रहा हूं ।।१२।।

यो वै श्रीवरुणप्रियो गजमुखो गौरीप्रियश्चेष्टदो
यो लक्ष्मीप्रियवेदपाठिपुरुषप्रेमार्द्रहार्दान्वितः
प्राप्याप्राप्यविवेचनापरजनैर्लक्ष्ये च यः प्राप्यते
तं गीर्वाणगिरार्चितं गणगुरुं गुण्यं गणेशं भजे ।।१३।।

वे ही वरुण देवता के प्रिय हैं ! हाथी जैसे मुख वाले वे ही पार्वती के प्रिय हैं ! और इष्ट वस्तुओं को प्रदान करते हैं ! वे ही लक्ष्मी माता के भी प्रिय हैं ! और वेदपाठी लोग तो उनसे हार्दिक प्रेम मानते हैं ! और जीवन में क्या प्राप्त करने योग्य है, क्या नहीं - ऐसी विवेचना करते-करते जब विद्वान् लोग निष्कर्ष निकालते हैं, तो उन्हें पता चलता है कि देवताओं की वाणी से अर्चित, भक्तों के गुरु, गुणों के प्रतिष्ठान, गणेश ही अन्तिम लक्ष्य हैं ! ऐसे भगवान् गणेश का मैं आज भजन कर रहा हूं ।।१३।।

मोक्षाशाश्रितमोक्षदायिपुरुषं तं शोकमोकं भजे
लोकाशाधृतलोकदायिफलदं तं देवलोकं भजे
शास्त्राशाश्रितशास्त्रबोधजनकं तं शास्त्रतत्त्वं भजे
सद्भावान्वितहार्दिकैकपरिलभ्यं लभ्यतत्त्वं भजे ।। १४।।

मोक्ष चाहने वालों को मोक्ष प्रदान करने वाले पुरुष (भगवान्) ! दुखों का नाश करने वाले ! सांसारिक इच्छाओं वालों को संसार का ही फल प्रदान करने वाले ! वह देवताओं की दृष्टि (कृपामय दृष्टि वाले) हैं। शास्त्र की आशाओं पर आश्रित होकर जो लोग गणेश का चिंतन करते हैं उनको शास्त्र का ज्ञान देते हैं ! इसलिए गणेश शास्त्रों का तत्त्व भी हैं ! और सद्भाव-पूर्वक हार्दिक-भावनाओं से जो लक्ष्य प्राप्त होता है, जो प्राप्त करने योग्य तत्त्व है, वही श्रीगणेश हैं ! मैं उनका भजन करता हूं ।।१४।।

पुण्यास्थाश्रितचित्तचिन्तितवपुश्चैकान्तशान्तस्थितो
दिव्यास्थास्थितशैवशोभितशिवश्श्रीवारिवाहश्च यस्-
सौख्याशान्वितवित्तकाङ्क्षिपुरुषार्चामोदभोगादिदश्-
श्रद्धादर्शितरूपरक्तवसनं श्रीविघ्ननाशं भजे ।।१५।।

पुण्य में आस्था का आश्रय ले लिया है चित्त में जिनके, (पुण्यकर्मतत्पर) ऐसे लोगों द्वारा चिन्तित ! एकान्त और शान्त स्थान में रहने वाले गणेश हैं ! दिव्य-आस्था में जो स्थित हैं, ऐसे शैव-पुरुषों से शोभित, वे श्रीगणेश, कल्याणरूप हैं, और (भक्तों के लिए) धनरूपी-जल के बादलों से बरसते हैं ! सुख-हेतु धनेच्छुक मनुष्यों की पूजा-अर्चना से प्रसन्न होकर, उनको वे प्रसन्नता-भोगादि प्रदान करते हैं ! और श्रद्धा के वशीभूत दिखाते हैं जो रूप अपना, ऐसे लाल रंग के वस्त्र पहनने वाले, गणेशजी का मैं भजन करता हूं ।।१५।।

भोश्शम्भोस्सुत! पश्य ते भगवतो लोको हि कुत्रैष्यति
धर्माधर्मविचारशून्यगतिको गर्ते प्रयाति ध्रुवं
गोहत्याद्विजदुःखदायिगतयस्संवर्धिताश्चाधुना
दुष्टानङ्कुशघाततो गणपते! धर्माय सङ्कर्तय ।।१६।।

हे शिव के पुत्र ! तुम तो स्वयं भगवान् हो ! तुम देखो तुम्हारा यह संसार कहां जा रहा है ! धर्म और अधर्म के विचार से शून्य गति वाला होकर निश्चित ही विनाश-रूपी गड्ढे में जा रहा है, गौहत्या, ब्राह्मणों का उत्पीड़न, ऐसी दुखदायक गतिविधियां आजकल बहुत बढ़ गई हैं ! हे गणपति ! धर्म की रक्षा के लिए, ऐसे दुष्टों को आप अपने अंकुश के प्रहार से काट डालो ।।१६।।

भक्तो दुःखनिमग्नचित्तवशतो धर्मात्पृथग्भ्राम्यति
सौख्यानां हि परम्परा तु भगवन् म्लेच्छादिदेशे गता
हिन्दूनां च मनोभ्रमं द्रुतमहो यद्धार्मिके प्रोदभूत्
तत् त्वं खण्डय नागवक्त्र! कलिहा! दोषान्नृणाम्भञ्जय ।।१७।।

गणेशजी ! आज तो आपका भक्त भी दुखों में डूबा हुआ मन होने के कारण, धर्म से अलग होकर घूम रहा है ! भगवन् ! आजकल सुखों की परम्परा तो म्लेच्छ (अंग्रेज आदि) के देशों में ही चली गई है ! और भगवन् ! अपने ही धर्म के प्रति हिंदुओं के मन में जो भ्रम उत्पन्न हुआ है , उसे आप जल्दी ही खण्ड-खण्ड कर दो (तोड़ डालो) ! हे कलिमल का नाश करने वाले ! हाथी जैसे मुख वाले, गणेशजी ! आप लोगों के दोषों का भी भञ्जन करो ।।१७।।

यद्यप्यर्चनमत्र तत्र भगवँस्ते मन्दिरेष्वाचरन्
लोके भक्तजनो न धर्मविरतः कुर्वन्प्रणामस्त्वयि
स्वर्गं चात्र सुखं शमं गणपते तेऽक्ष्णां कृपाभाजनो
भूत्वैश्वर्यपतिस्सदा नरमणिस्त्वत्कीर्तने संरतः ।।१८।।

भगवन् ! यद्यपि जहां-तहां मन्दिरों में भक्त लोग आपकी पूजा-अर्चना करते हैं ! आपको प्रणाम करते हैं ! धर्म से (विरत) अलग नहीं होते, और स्वर्ग और सुख-शान्ति प्राप्त करते हैं । आपकी नेत्रों के दृष्टि से कृपा-भागी बनकर, वे ऐश्वर्यों के भी स्वामी बनते हैं, मनुष्यों में श्रेष्ठ हो जाते हैं तथा आपका ही कीर्तन करने में रम जाते हैं ।।१८।।

राज्ञां स्वार्थरतिस्तथा च जनता नित्यं हि कष्टे गता
कोऽप्यद्येह परं न पश्यति जनं यद्वा महाराक्षसाः
शिश्नायोदरपूर्तयेऽपि भगवन्! सर्वं जगद्धावति
त्वं कृत्वा सकलञ्च सुस्थमथ भो भक्तान्समुद्धारय ।।१९।।

आजकल तो राजाओं की केवल स्वार्थ में ही प्रीति है । जनता दिन-प्रतिदिन कष्ट में चली गई है । आज कोई भी दूसरे के दुख को नहीं देख रहा है । लोग महाराक्षस जैसा बर्ताव कर रहे हैं । हे भगवन् ! शिश्नोदर की पूर्त्ति के लिए ही सारा जगत् दौड़ रहा है । आप ही इस सब को ठीक करके अपने भक्तों का उद्धार कर सकते हैं । आपकी जय हो ।।१९।।

त्वं तु ख्यापितलोकशोकहरणस्त्वञ्चास्य नित्या गतिः
त्वं दुःखेषु सुखम्बिभर्षि भवमुट्! त्वं हर्षकारी नृणाम्
चेद्भाग्यं विपरीततांप्रति गतं सर्वं च नष्टम्भवेत्
भक्तिस्ते हृदयेन चिन्तनमपि श्रीदं समुद्धारकम् ।।२०।।

भगवन् ! आप तो संसार के शोक का हरण करने वाले हैं ! ऐसी आपकी प्रसिद्धि है । आप सब की नित्य गति हैं ! आप दुखों में भी सुख भर देते हैं ! आप प्राणियों के भव-भय को चुराकर उन्हें हर्षित करते हैं ! अगर भाग्य भी विपरीत हो जाए, और सब कुछ भी नष्ट हो जाए, किन्तु आपकी भक्ति हृदय में

रहे, आपका चिन्तन मन में रहे, तो पुनः सारी सम्पत्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं, और आपका चिन्तन ही उद्धार भी कर देता है ।।२०।।

को वा त्वत्सरणीम्प्रयाति मतिराट्! को वा भवेत्त्वादृशः
को वाऽऽखौ परिरोहति द्विजजनान् पात्यत्र कस्त्वद्विना
कश्चाऽत्रेभमुखा!ऽङ्कुशेन सततं दुष्टान् निहन्ति,श्रियां
वारीणि श्रितचिन्तनेभ्य इह कः प्रावाहयेच्छ्रीप्रदः[5] ।।२१।।

हे बुद्धि के राजा! कौन आपकी होड़ कर सकता है? कौन तुम जैसा हो सकता है? तुम्हारे अतिरिक्त ऐसा कौन है, जो चूहे पर चढ़ता हो? तुम्हारे अतिरिक्त ऐसा कौन है, जो ब्राह्मणों की रक्षा करता हो? अरे हाथी के जैसे मुख वाले! और दूसरा कौन है, जो निरन्तर दुष्टों को मारता हो? और अपने चिन्तन की शरण में आए हुए लोगों के लिए शोभा और सम्पत्तिरूपी जलधारा बहा देता हो ।।२१।।

भक्तिभ्राजितलोकशोकहरणस्संलोक्य मज्जीवनम्
दन्तिन्! ब्राह्मणबालकस्य तनुतां भूयो महामङ्गलम्
सद्यो विघ्नगणान् विनश्य गणराट्! सम्राड्जनं मां कुरु
यस्माद्यौवनपुष्पसौरभमनास्स्यां त्वत्समर्चाकरः।। २२।।

भक्ति से शोभित लोगों का शोक आप ही हरण करते हैं ! दन्तिन् ! आप (मुझ) ब्राह्मण-बालक के जीवन पर दृष्टिपात करके मेरा महान् मङ्गल करो । हे गणराज! बहुत जल्दी ही मेरे सभी विघ्नों को नष्ट करके मुझे सम्राट् बनाओ ! जिससे मैं यौवन के पुष्पों की सुगन्धि से सुगन्धित मन वाला होकर आपकी ही पूजा-अर्चना करने में लग जाऊं ।।२२।।

मखोद्भूतधूमैस्सदा तुष्टिमन्तं
सुमन्त्रैस्तथा श्रद्धया हृष्टिमन्तं
मधून्यापिबन्तं घृतैरिष्टवन्तं
गणेशं हि होमप्रियं भावयामः ।।२३।।

यज्ञ से उठते हुए धुँएं की सुगन्ध से सदा ही सन्तुष्ट होते हैं ! ब्राह्मणों के श्रद्धा-युक्त उच्चारित वेद-मन्त्रों को सुनकर जो बहुत ही हर्षित होते हैं ! जब घी और शहद से उनके नाम की आहुति हवन-कुण्ड में पड़ती है, तो वे घी और शहद को पीते हुए बहुत ही खुश होते हैं, और आशीर्वाद देते हैं । ऐसे गणेशजी को हवन बहुत ही प्रिय है । मैं उनकी भावना अपने मन में करता हूं ।।२३।।

सुगन्धिप्रियं रक्तगन्धानुलिप्तं
समृद्धौ च सिद्धौ हृदा सक्तिमन्तं

सहस्रैस्सदाख्यैर्जलैश्चाभिषिक्तं
विविक्तं विवृद्धिप्रदं पूजयामः॥२४॥

भगवान् गणेश को पुष्पों तथा इत्रों की सुगन्धि बहुत ही प्रिय है। उनका शरीर लाल चन्दन से चर्चित है। ऋद्धि और सिद्धि में अपनी हार्दिक भावनाओं से आसक्त हैं। सहस्र नामों से ब्राह्मण लोग उनका अभिषेक करते हैं। वे गणेशजी, अधिकतर एकान्त में रहते हैं। और वही मनुष्य की प्रसन्नता में वृद्धि करते हैं। सम्पत्ति बढ़ाते हैं। आज हम सब उनका ही पूजन कर रहे हैं ॥२४॥

क्वचिद्रामरूपैः क्वचित्कृष्णरूपैः
क्वचिद्रुद्ररूपैः क्वचिद्भीमरूपैः
क्वचिद्धस्तिरूपैर्धरायां चरन्तं
क्षणेनैव लोकङ्करं भावयामः ॥२५॥

कहीं-कहीं राम-रूप में, कहीं-कहीं कृष्ण-रूप में, कहीं रुद्र बनकर, कहीं-कहीं हाथी का रूप धारण करके, इस धरती पर वे गणेशजी विचरण करते हैं, और एक क्षण में ही संसार का निर्माण कर देते हैं ! गणेशजी की मैं अपने हृदय में भावना करता हूं ॥२५॥

यदा नृत्यकाले क्वचिद्ब्रह्मभाण्डे
स्वशुण्डं परिभ्रामयेद्वक्रतुण्डः
तदा तारकाश्चन्द्रनक्षत्ररूपाः
क्षिपन्ति द्रुतं तत्प्रहारेण दूरम् ॥२६॥

जब कभी इस ब्रह्मांड में नाचते-नाचते वे वक्रतुण्ड, अपनी सूण्ड को इधर-उधर घुमाते हैं, तब ये तारे, ये चन्द्रमा और ये नक्षत्र, उस सूण्ड के प्रहार से खण्ड-खण्ड होकर दूर-दूर जा गिरते हैं ॥२६॥

क्वचिन्मेघरूपैर्महावृष्टिरूपः
क्वचित्सूर्यरूपैर्महातापयुक्तः
क्वचिद्वा हिमांशूयते शीतरश्मिः
क्वचित्पुष्पराशौ सुगन्धायतेऽसौ ॥२७॥

बादलों के रूप में वे ही कभी इस संसार में महावृष्टि करते हैं! कभी सूर्य के रूप में वे ही महान् ताप से युक्त रहते हैं,और कभी चंद्रमा बनकर, वे ही शीतल किरण बरसाते हैं, तथा कभी फूलों में सुगन्धि बनकर वे ही महकते हैं ॥२७॥

क्वचिद्वा समष्टीयते लोकरूपः
क्वचिद्व्यष्टिरूपैश्चरेद्ब्रह्मरूपः

श्रुतिस्मार्तशास्त्राक्षरैर्लक्ष्यते वा
पुराणादिलेखङ्करं तं नमाम: ।।२८।।

कहीं इस संसार के समष्टि-रूप में वे ही हैं, कहीं व्यष्टि-रूप में विराजमान हैं। कहीं ब्रह्मरूप होकर वे गणेशजी ही घूमते हैं। वेद, शास्त्र, स्मृतियां और पुराण - इनके अक्षरों में वे गणेशजी ही लक्षित होते हैं। पुराणों लिखने वाले उन गणेश जी को हम नमस्कार करते हैं ।।२८।।

त्रिनेत्रस्य पुत्रं त्रिनेत्रं त्रिशूलि-
प्रियं च त्रिदु:खापहं त्र्यम्बकार्च्यं
त्रिवेदं त्रियादं[6] त्रिमुन्यर्चितं[7] तं
त्रिलोकैकनाथं भजे वक्रतुण्डम् ।।२९।।
(त्रिलोकं स्वलोकाच्च पश्यन्तमीडे)

तीन नेत्र वाले शिव के जो पुत्र हैं, उनके स्वयं भी तीन नेत्र हैं, और त्रिशूल धारण करने वाले शिव भगवान् उन्हें बहुत ही प्रिय हैं, वे (आधिदैविक, आधिभौतिक, अध्यात्मिक) तीनों दुखों को नष्ट कर देते हैं। भगवान् शिव उनके पूजनीय हैं। तीन वेदों (ऋग्-यजुस्-साम) में वही बसते हैं। मनुष्य को स्त्री भी वे ही प्रदान करते हैं। पाणिनि, कात्यायन, पतञ्जलि ये तीनों मुनि, उन्हीं की तो पूजा करते हैं। ऐसे तीनों लोकों के स्वामी वक्रतुण्ड भगवान् की, मैं वन्दना करता हूं। भजन करता हूं। (तीनों लोकों पर गणेशलोक से ही निगरानी रखे हुए श्रीगणेश-भगवान् की मैं स्तुति करता हूं।) ।।२९।।

चतुर्वेदमूलं चतुर्मार्गसुस्थं
चतुर्भिश्च विप्रैर्मुदार्च्यं सुसिद्ध्यै
चतुष्कामदं चातुरीचित्रकारं[8]
चमत्कारिलोकं[9] भजे सर्वकारम् ।।३०।।

चारों वेदों का मूल गणेशजी हैं। चौराहे पर देवता के रूप में गणेशजी ही स्थित रहते हैं। चार ब्राह्मण मिलकर उनका ही आनंदपूर्वक सिद्धि प्राप्त करने के लिए अर्चन-वन्दन करते हैं। धर्म,अर्थ,काम,मोक्ष - इन चारों पुरुषार्थों को गणेशजी ही प्रदान करते हैं। वही इस जगत् के चतुर-चित्रकार हैं। उनका स्वरूप बड़ा ही चमत्कारी है, और वे सब कुछ करने में समर्थ हैं। मैं उनका भजन करता हूं ।।३०।।

भुजङ्गासनैर्वा प्लवङ्गासनैर्वा
कुरङ्गासनै: रङ्गमश्वासनैर्वा
तरङ्गासनैर्वा तुरङ्गासनैर्वा
मतं पूजितं हर्षितं हर्षयाम: ।।३१।।

भुजङ्ग (साँप) है आसन जिनका (विष्णु, सर्पासना देवी इत्यादि बहुत से देवताओं का भुजङ्ग ही आसन है), प्लवङ्ग (मेंढक आदि उछलकर चलने वाले जीव) है सवारी जिनकी, हिरन है सवारी जिनकी, तथा रंगमंच पर जो बैठने वाले लोग हैं (नटादि) , या फिर नदी, समुद्र की लहरों पर स्थित (वरुणादि) जो हैं, घोड़े पर बैठने वाले जो (राजादि) व्यक्ति हैं, - उन सभी के द्वारा आप ही पूजित हैं, सम्मानित हैं, हर्षित हैं। हम भी आपको इसी तरह हर्षित करते हैं ।।३१।।

यं च नक्रासना यं च काकासना
यं शवैकासना श्रीशिवैकासना
यं तथोल्लूकरूढा च हंसासना
मूषकारूढदेवं स्मरेद्विघ्नहम् ।।३२।।

मगरमच्छ पर बैठने वाली गङ्गा-माँ, कौवे पर बैठने वाली धूमावती-माँ, मुर्दे पर बैठने वाली काली-माँ, और शिव के ऊपर बैठने वाली काली-माँ, उल्लू पर चढ़ने वाली लक्ष्मी-माँ, हंस पर चढ़ने वाली सरस्वती-माँ, जिन मूषकवाहन, गणेशभगवान् का स्मरण, ध्यान करते हैं, हम भी अपने विघ्नों के नाश के लिए, उनका ही स्मरण कर रहे हैं ।।३२।।

वज्रपाणिश्च वा पाशपाणिश्च वा
दण्डपाणिश्च वा पद्मपाणिश्च वा
शूलपाणिश्च वीणैकपाणिश्च वा
मोदते वीक्ष्य यं तं गणेशं नुमः ।।३३।।

वज्र है हाथ में जिनके ऐसे इन्द्र, पाश है हाथ में जिनके ऐसे वरुण, दण्ड है हाथ में जिनके ऐसे यमराज, कमल है हाथ में जिनके ऐसे नारायण, त्रिशूल है हाथ में जिनके ऐसे शिव, वीणा है हाथ में जिनके ऐसी सरस्वती - ये सब गणेशजी के दर्शन करने से बहुत खुश होते हैं। हम भी उनकी वन्दना करते हैं ।।३३।।

शुद्धबुद्धप्रवृद्धैर्नुतं संस्तुतं
युद्धवृद्धैस्समृद्धैस्सदा वन्दितं
शास्त्रगृद्धैर्मुहुस्तं जयायार्चितं
श्राद्धरूपं सुरूपं गणेशं नुमः ।।३४।।

जो व्यक्ति बहुत ही शुद्ध, बुद्ध और प्रवृद्ध (सम्पन्न) हैं, वे सब गणेश जी की स्तुति करते हैं। महावीर, युद्धों के जानकार, और बहुत धनवान् व्यक्ति भी सदा गणेशजी की वन्दना करते हैं। शास्त्रार्थ करते समय, जो स्वमत से प्रतिपक्षी विद्वान् पर गिद्ध की तरह झपट्टा मारते हैं, ऐसे विद्वान् भी अपनी जीत के लिए बार-बार गणेशजी की अर्चना करते हैं। वे गणेशजी साक्षात् श्रद्धा के स्वरूप हैं। बहुत ही सुन्दर हैं। हम उनको नमस्कार करते हैं ।।३४।।

नागलोकङ्गतं वारुणे संस्थितं
प्रेतलोकस्थितं पैतृगान्धर्वगं
वैष्णवे शाङ्करे यक्षलोके गतं
स्वेच्छया तं हि सर्वत्र यान्तं नुम: ।।३५।।

नागलोक में गए हुए, वरुण-लोक, प्रेत-लोक में भी जो स्थित रहते हैं, पितृलोक, गन्धर्वलोक में स्थित, विष्णुलोक, शिवलोक, यक्षलोक में भी जो सदा स्थित हैं। और प्रत्येक स्थान पर अपनी इच्छा से ही घूमते रहते हैं, ऐसे गणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ।।३५।।

डाकिनीशाकिनीशं श्मशानेशयं
यामिनीकामिनीशं च नाकेशयं
भ्रामरीशं[10] भ्रमध्वान्तहं केशयं[11]
रागिनीशं[12] रजन्यां भ्रमन्तं भजे ।।३६।।

वे डाकिनी-शाकिनियों के स्वामी, श्मशान में सोते हैं। इन रातों के और कामिनियों के वही ईश्वर हैं। वे कभी-कभी स्वर्ग में भी जाकर सो जाते हैं (या स्वर्ग की समृद्धि को बढ़ाते हैं)। वे जल (समुद्र,नदी, सरोवर आदि) में भी शयन करते हैं। भ्रामरी नामक विद्या के स्वामी हैं। भ्रान्तिरूपी अन्धकार को नष्ट कर देते हैं। सङ्गीत-शास्त्र की रागनियों (या रागिनी स्त्रियों) के वे ही स्वामी हैं (अर्थात् सङ्गीतविद्या के लिए भी गणेश जी की उपासना करनी चाहिए)। और जो गणेशजी रात्रिकाल में भ्रमण करते हैं,उनका मैं भजन करता हूं ।।३६।।

कार्तिकेयाग्रजं शम्भुपुत्रं शिवं[13]
श्रीशिवाराधकं मूषके राजितं
पीतवस्त्रं सशस्त्रं गजास्यं गुरुं
गुण्यपुण्यं गिरामेकलभ्यं नुम:[14]।।३७।।

वे गणेशजी, कार्तिकेय के बड़े भाई हैं। शिव के पुत्र हैं, या स्वयं ही शिव (कल्याणकारी) हैं। और शिव की ही पूजा करने वाले हैं। चूहे पर विराजमान हैं। पीले रंग के कपड़े पहनने वाले, चारों हाथों में शस्त्र-धारण करने वाले, हाथी के मुख वाले, सब के गुरु हैं ! गुणों से युक्त हैं ! पुण्य-दर्शन हैं ! सभी वाणियों का एकमात्र प्राप्य हैं ! हम उनको नमस्कार करते हैं ।।३७।।

कश्चिद्दन्ती चरति भुवने मङ्गलैर्मण्डितस्सन्
हस्त्यास्योऽसौ हरति जगतामापदस्सर्वदैव
ब्राह्मीधारां धरति गणपः पूज्यते मूर्त्तरूपस्-
सोऽस्मत्तापान्दहतु दहनस्सूर्यकोटिप्रभावान् ।।३८।।

कोई एकदन्त, इस संसार में माङ्गलिक-शृङ्गार वाले घूमतें है। वे हस्तिमुख, इस संसार की सारी आपत्तियों को सदा ही हरते हैं। ब्रह्म-तत्त्व की जो धारा है, उसको धारण करने वाले, वे गणपालक, मूर्ति रूप में पूजे जाते हैं। वे ही हमारे सभी तरह के तापों को जला दें ! क्योंकि वे करोड़ों सूर्य की प्रभा वाले हैं ।।३८।।

आख्वारूढस्सुरनरमुनीन् पाति पापप्रणाशी
नित्यं गूढं प्रकटयति वपुर्भक्तियुक्ताय युक्तो
दोषामूढान् जलनवधियोल्लासयेद्भासरूपो
व्यूढोरस्कान् रणगतजनान् यो जयैर्योजयेद्वा ।।३९।।

मूषक पर चढ़कर, देवता, मनुष्य, ऋषि, मुनि, इन सबकी रक्षा करते हैं ! उनका स्वभाव पापों को नष्ट करने वाला है ! जो उनकी भक्ति से युक्त हो जाते हैं, और गणेशजी से ही जुड़े रहते हैं, ऐसे लोगों के लिए अपने उस रूप को प्रकट करते हैं, जो सदा ही बहुत गूढ़ है। दोषों के कारण, जो लोग मूढ़ता को प्राप्त नहीं हुए हैं, उनके लिए जल की तरह नयी बुद्धि[15] प्रदान करके, उनका उल्लास बढ़ाते हैं और स्वयं प्रकाश-स्वरूप हैं, और चौड़े वक्षस्थल वाले, युद्ध में गए हुए वीरों को वे ही विजयी बनाते हैं ।।३९।।

दिव्याकाशे भ्रमति शिवराड्लीलयोल्लासहासो
ब्रह्माकाशे परिणतगुरुर्गीष्पतीनां गिराभिर्-
भक्त्याकाशे यजनहृदयैर्दृश्यते हृत्प्रदेशे
मुक्ताकाशो मतियुतमतो मूलतत्त्वप्रवेशे ।।४०।।

दिव्य स्वर्ग के आकाश में वे शिवराज[16], अपनी लीला के उल्लास से हंसते हुए भ्रमण करते हैं। वे गणेश, बृहस्पति समान देवताओं की वाणियों द्वारा, ब्रह्मरूपी आकाश में परिणत हुए गुरु ही हैं (अर्थात् गणेश ब्रह्माकाश-स्वरूप हैं)। यज्ञ,स्तुति आदि में लगा रहता है मन जिनका, वे श्रद्धालु, अपने हृदय में भक्ति के आकाश की तरह गणेशजी को देखतें हैं। और मूल-तत्त्व जो ब्रह्म है, उसमें प्रवेश करते समय बुद्धिमान लोगों द्वारा गणेशजी ही मुक्ताकाश (बंधनरहित) माने गए हैं ।।४०।।

विघ्नोद्धर्ता विगमगतिको दन्तिराट् राट्सु सम्राट्
दुष्टोद्धन्ता विजयबलदो देवराट् सैन्यविभ्राट्
सौख्यङ्कारी धनमतिकरो धन्यधन्यश्शिवोऽन्यो
नान्यो मान्यो नतिपरजनैरुच्यते यो ह्यनन्यः ।।४१।।

विघ्नों से उद्धार करने वाले ! जिनकी कोई गति नहीं,उनकी एकमात्र गति, वे दन्तिराज हैं, जो राजाओं के भी राजा हैं ! दुष्टों संहार करते हैं। व्यक्ति को विजय होने के लिए बल प्रदान करते हैं ! वे ही देवताओं के राजा हैं

! और सैन्य में शोभित होते हैं ! वे ही मन के दुख को हटाकर सुख पैदा करते हैं ! धनप्रद बुद्धि उत्पन्न करते हैं ! धन्यों के धन्य हैं ! और वे ही दूसरे शिव हैं ! उनके अतिरिक्त किसी को भी मत मानों ! नमस्कार करते हुए लोगों के द्वारा वही अनन्य कहे जाते हैं ।।४१।।

शौर्यं तेजो नृपतिगुणतां सूर्यवान् वक्रतुण्डस्-
सौम्यं शान्तिं दिशति जगते चन्द्रगुण्यो गणेशो
वीर्यं वै साहसमपि च यो मङ्गलाढ्यो ग्रहार्च्यो
बुद्धिं हारित्यमथ कुरुते श्रीबुधोल्लासितस्सन् ।।४२।।

वक्रतुण्ड ही सूर्य बनकर, शूरवीरता, तेज तथा राजाओं के गुण प्रदान करते हैं। और वे ही गणेश चन्द्रमा बनकर संसार में सौम्य और और शान्ति देते हैं।
जब गणेशजी, मङ्गल-गुणों से युक्त होते हैं, तो वे पराक्रम और साहस प्राणियों को प्रदान करते हैं। जब गणपति, बुध के गुणों से उल्लसित होते हैं, तो वे ही संसार को हरा-भरा और बुद्धि संपन्न कर देते हैं ।।४२।।

बार्हस्पत्योऽर्चितगुरुगुणो गौरवं ज्ञानलोकं
सौन्दर्यं वा शुभकर-सुरश्शुक्ररूपेण भोगं
न्यायं नानोन्नतिपथधनं सौरिरूपो रणाग्रो
राह्वाह्वानैर्गणपतिरसौ गुप्तवित्तं ददाति ।।४३।।

बृहस्पति स्वरूप वे गणेशजी, गुरू के रूप में पूजे जाते हैं ! वे ज्ञान का प्रकाश और गौरव प्रदान करते हैं, वे ही शुभ-कार्यों को करने वाले देव, जब शुक्र का रूप धारण करते हैं, तो मनुष्य को भोग और सौंदर्य प्रदान करते हैं ! जब वे गणेशजी, शनैश्चर का रूप धारण करते हैं , तो मनुष्य के लिए न्याय करने की शक्ति, अनेक तरह की उन्नति प्रदान करने वाला रास्ता, और तत्सम्बन्धी धन, एवं युद्ध में निपुणता प्रदान करते हैं ! और राहु के रूप में आवाहित गणेशजी ही, अपने भक्तों को गुप्त धन देते हैं ।।४३।।

यः केत्वाख्यो विकसति गुणान्मानसाध्यात्मिकाँश्च
इत्थं देवो ग्रहपतिरसौ भाग्यलेखी जनानां
सूक्ष्मे स्थूले परिणतवपुर्भाति भास्वान् प्रशास्ता
विघ्नध्वंसो जयतु दयतान्मादृशे स्तोत्ररक्ते ।।४४।।

जिन्हें हम केतु कहते हैं, वे भी गणपति ही हैं। वह मनुष्य के मानसिक और आध्यात्मिक गुणों का विकास करते हैं। इस प्रकार गणेशजी, स्वयं ग्रहों के स्वरूप हैं, एवं पृथक् रूप से ग्रहों के स्वामी भी हैं। वे मनुष्यों के भाग्यों का लेखा-जोखा रखने वाले हैं। सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ में और स्थूल से स्थूल पदार्थ में वही गणेश जी परिवर्तित हो जाते हैं। वे ही तेजस्वी और बहुत ही उच्च स्तर के शासक हैं। ऐसे विघ्नध्वंसक गणेशजी की जय हो, वे मेरे जैसे स्तुति करने वाले भक्तों पर दया करें ।।४४।।

हेमं हेरम्बगजवदनो यच्छति स्वर्णरूपस्-
तद्वद्द्याद्रजतमपि यो राजतैः राजितस्सन्
ताम्रस्थोऽयं विविधफलदः कामदो नम्रताढ्यो
लौहस्थोऽपि श्रयति बलता-दानमर्चिस्स्वरूप:[17] ।।४५।।

स्वर्णदेह वे गजवदन, पार्वती के पुत्र ही इस संसार के लोगों को स्वर्ण-आभूषण प्रदान करते हैं। इसी प्रकार चांदी जैसे रंग वाले भगवान् गणेशजी, इस दुनियाँ में चांदी की बरसात करते हैं। तांबे की मूर्ति में स्थित गणेशजी सभी तरह के फल प्रदान करते हैं। वे मनुष्यों को अभीष्ट काम प्रदान करते हैं और विनम्रता की मूर्ति हैं। इसी प्रकार वे ज्योतिष्मान् स्वरूप वाले गजानन, लोहे की मूर्ति में विराजमान होकर, पूजा करने वालों को बलवान् बनाते हैं ।।४५।।

निम्बस्थोऽयं हरति च रुजः काष्ठरूपो रसाढ्यो
धान्यं यच्छेदतुलधनतां निम्बमूर्त्याश्रितोऽहो
चाश्वत्थस्थो हरिपदसुरक्तिं ददातीव कोऽसौ
वृक्षोज्जीवी रहसि वसति श्रीवनस्थो गणेश: ।।४६।।

नीम के पेड़ में स्थित, काष्ठ-रूप गणेशजी स्वयं रसवान् हैं। और सेवन करने वालों के रोगों को हर लेते हैं। यदि उन्हीं की नीम की लकड़ी की मूर्ति बनाकर पूजा की जाए, तो वे अतुल धन-धान्य प्रदान करते हैं। पीपल के पेड़ में विराजमान गणेशजी, विष्णु भगवान् में प्रेम उत्पन्न करवाते हैं। सभी वृक्षों में स्थित और सभी वृक्षों के जीवन स्वरूप वे गणेशजी, एकान्त, शोभायमान वन में निवास करते हैं ।।४६।।

चणकचूर्णविनिर्मितलड्डुकं
गणप! ते प्रददामि मधुश्रितं
न न न मेऽल्पतरं त्विह वस्तुकं
सकलभोज्यपदार्थकरो भवान् ।।४७।।

हे गणेश जी! मैं तुमको शहद से बने हुए, बेसन के लड्डू चढ़ाऊँगा! किन्तु, ये तो बहुत छोटी-छोटी वस्तुएं हैं! भगवन् ! आप सभी तरह के भोज्य-पदार्थ देने वाले हो। मैं आपको क्या दे सकता हूं (कुछ नहीं) ।।४७।।

गणप! चेक्षुरसं प्रददामि ते
पिब भवे: मम शीतलमानस:
भवसुता!ऽद्य विलोक्य तवाननं
सफलजातमिवास्मि त्वदर्चनै:।।४८।।

हे गणेश जी ! मैं तुम्हें गन्ने का रस दे रहा हूं, इसे पियो और मेरे लिए अपने मन को शीतल कर लो । हे शिव के पुत्र ! आपका मुख देखकर और आपकी पूजा-अर्चना करने से आज मेरा जन्म सफल हो गया ।।४८।।

शिवसुत! प्रतनोमि भवत्कृते
विविधगन्धसमन्वितपुष्पिका:
पदमयीरिव वर्णमयी: शुभा:
दयतु देव! दयामय! दन्तिराट् ।।४९।।

हे शिव के पुत्र ! मैं तुम्हारे लिए अनेक सुगन्धों से युक्त, शब्दमयी और रंगीली, मङ्गलदायक पुष्पिका प्रदान करता हूं । हे दन्तिराज ! आप बहुत दयालु हो ! मुझ पर दया करो। ।।४९।।

कमल-चम्पक-जाति-सुमल्लिका:
बकुल-सेवति-कुन्दज-पाटला:
तगर-यूथि-कदम्बक-केशरान्
गणप! ते प्रददामि च किंशुकान् ।।५०।।

कमल, चम्पा, जाति, रजनीगन्धा, बकुल, सेवती, कुन्द, गुलाब, तगर, जूही, कदम्ब, केसर, किंशुक । हे गणेशजी ! इन सब पुष्पों को मैं आपको समर्पित करता हूं ।।५०।।

किमथ किं विचिनोमि त्वकां विना
मम मनो दिशतीव न सद्दिशां
वरद! शारदचन्द्रमुख! श्रयेः
शिवमयं सकलं, शमनं द्विषाम् ।।५१।।

आपको छोड़कर किस-किस संसार की वस्तु का चिन्तन करता फिरूंगा! (अर्थात् जो आपको नहीं चुनता, वह विनाशशील वस्तुओं में ही लगा रहता है) । गणेशजी! मेरा मन मुझे सही दिशा नहीं सुझा पा रहा है ! इसलिए हे शरद् पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान मुख वाले ! आप ही मुझे सही बताओ । और मेरे जीवन को कल्याणमय और शान्तिमय बना दो, और मेरे से द्वेष करने वाले शत्रुओं का नाश कर दो ।।५१।।

किमहमथ ददानीश! त्वदर्थे जगत्यां
सकलमपि पदार्थाद्यं तवैवास्ति सृष्टं,
तदपि नृमनसो वै सम्परीक्षां विधातुं
त्वमिह च कुरुषेऽहो स्वीयपूजाविधानम् ।।५२।।

गणेशजी ! इस संसार में, मैं आपको क्या चीज दूं ! क्योंकि सारे ही पदार्थ आदि तुमने ही बनाए हैं ! फिर भी मनुष्य के मन की परीक्षा करने के लिए आप ही विविध प्रकार की पूजा का विधान शास्त्रों के द्वारा करते हो ।[18] (ताकि जाना जा सके कि मनुष्य कितना उदार है या कितना लोभी) ।।५२।।

विनायकोऽधिनायकोऽपि पावकोऽतिदाहको
विधायको ह गायकोऽथ सर्वलोकवाहको
सुसायकस्त्रिशूलधारकोऽरिमारको विभु:
प्रभुर्मदीयचेतनात्मनीव वासतां व्रजेत्।।५३।।

आप ही विनायक हैं ! आप ही अधिनायक हैं ! आप ही दग्ध करने वाली अग्नि हैं ! आप ही विधायक हैं ! आप ही गायक हैं ! आप ही समस्त लोक को वहन करते हैं ! आप बाणस्वरूप भी हैं (या अच्छे,तीखे बाणों वाले हैं)! आप ही त्रिशूल को धारण करते हैं ! और दुष्टों नाश करते हैं ! आप विभु हैं ! हे प्रभु ! आप मेरी चेतना स्वरूप आत्मा में निवास करें ।।५३।।

विधीश-धीश-देवतेश-सिद्धिदेश-दिव्यराट्
विशोकदूषकोऽथ मूषकप्ररूढसौख्यराट्
श्मशानवासिडाकिनीपिशाचिनी-प्रपूज्यराट्
विराडशेषलोकराड् बिभर्त्तु मत्सुमङ्गलम् ।।५४।।

विधि-विधान के स्वामी आप हैं ! बुद्धि के स्वामी आप हैं ! आप ही देवताओं के राजा हैं ! सिद्धि के एक मात्र स्थान आप हैं ! दिव्य लोक के राजा आप हैं ! मनुष्यों के विशिष्ट शोक को नाश करने वाले आप ही हैं ! आप ही मूषक पर चढ़ने वाले और सुखों से विभ्राजित हैं ! आप श्मशान में रहने वाली डाकिनी, पिशाचिनी आदि के पूजनीय राजा हो ! आप विराट् स्वरूप वाले हैं । और समस्त चौदह लोकों के स्वामी हो ! आप ही मुझे सुन्दर मङ्गलों को प्रदान करो ।।५४।।

रमेश-पार्वतीश-रुक्मिणीश-देव-मोददश्-
शचीश-पावकेश-नीरजेश-शेष-सौख्यदो
धरेश-मानुषेश-नाग-नाग-वृन्द-वन्दितस्-
सुचन्दनाश्चितो गणेश! हेमवन्! प्रपाहि माम्।।५५।।

रमेश, पार्वती-पति, रुक्मिणी के स्वामी कृष्ण, आदि जो देवता हैं , उनको आप खूब प्रसन्नता प्रदान करते हो ! शची के पति इन्द्र, अग्निदेव, कमलपति (सूर्य), एवं शेषनाग - इनको भी आप ही सुख प्रदान करते हो ! धरती के राजा, मनुष्यों के राजा, हाथी तथा नागों के समूह भी सदा आपकी ही वन्दना करते हैं ! आप बहुत सुन्दर चन्दन से चर्चित शरीर वाले हैं ! हे गणेश ! आप स्वर्णकान्ति हैं ! आप मेरी रक्षा करो ।।५५।।

कथा-कवीश-कव्यभुक्-कलेन्द्र-कामनायक:

खगेश-खेचरेश-खस्वरूप-खान्त-नायको
गिरेश-गायकेश-गामि-गुण्य-गो-गणाग्रगो
घनेश! विघ्नहा निघण्टुबोधदो घटान्तक:।।५६।।

कथा-लेखक जो कविश्रेष्ठ, कव्य (पिण्डादि) का भोजन करने वाले जो पितर, कलाओं के स्वामी, और जो कामदेव हैं, वे भी आपकी ही वन्दना करते हैं ! पक्षीराज गरुड़, आकाश में विचरण करने वाले जीव जन्तुओं के जो स्वामी हैं वे, आपको ध्याते हैं ! आप स्वयं आकाश जैसे स्वरूप वाले हैं ! इस आकाश का अंत भी आप ही हैं , ऐसे आप नायक हैं ! आप वाणी के स्वामी हैं ! सङ्गीत कला से युक्त मनुष्यों के स्वामी भी आप ही हैं ! (गामी) आप कहीं भी जाने में निपुण हैं ! गुरु स्वरूप हैं ! गौ-स्वरूप हैं (अर्थात् गाय में भी वास करते हैं) ! और गण में अग्रगण्य हैं ! इन बादलों के राजा भी आप ही हो ! निघण्टु नामक शास्त्र का ज्ञान देने वाले आप हो ! आप विघ्नों का नाश कर देते हो ! और (विपत्ति की) घटाओं का अन्त करने वाले भी आप ही हो ।।५६।।

गमी गवीश-गीष्पति-श्रुतीश-गोपतिर्भवान्
दिवा-दिवेश-यामिनीश-दैन्यदारकेश-राट्
दिशा-निशा-दिनादि-चक्रवर्त्तक: प्रवर्त्तको
जयेद् गणेश! वक्रतुण्ड! पण्डितत्त्वनर्तक:।।५७।।

भ्रमणशील, गायों के स्वामी भगवान कृष्ण,वाणी के स्वामी बृहस्पति, श्रुति के स्वामी नारायण, और इन्द्रियों के स्वामी भी आप ही हैं। दिन भी आप हो ! सूर्य भी आप हो ! राकेश भी आप हो ! दरिद्रता आदि दीनता को दूर करने वाले भी आप हो ! आप राजा हो ! दिशा, निशा, प्रभात आदि के चक्र को आप ही चलाते हो ! आप इस संसार के ही महान् प्रवर्त्तक हो। हे वक्रतुण्ड ! गणेश! आप ही पण्डितत्त्व का नाच नचाने वाले हो ! आपकी जय हो ।।५७।।

उमामहेश्वरप्रसन्नताप्रवर्धको भवान्
शचीपुरन्दरप्रसन्नताप्रदो भवान् गुरो!
रमारमेश्वरास्यहास्यदायको भवाञ्जयेद्
गिरा-गिरेश्वराशुमोदकारिरूपवान् भवान् ।।५८।।

उमा-महेश्वर की प्रसन्नता में आप ही वृद्धि करने वाले हो ! शची और पुरन्दर को आप ही प्रसन्नता प्रदान करते हो ! गुरु ! रमा-रमेश्वर के मुख पर आप ही हंसी रूपी प्रसन्नता देते हो ! आपका रूप सरस्वती और विद्वानों को तत्काल सुख प्रदान करने का है ! आपकी जय हो ।।५८।।

फलव्रतैर्जलव्रतै: घृतव्रतैर्मधुव्रतै:
पयोव्रतैस्समर्च्यते शुभङ्करो महेश्वरस्-

तथैव वायुमात्रपायिभिश्चतुर्थ्यभोजनै:
प्रजप्यते मनश्श्रितं गणेशमन्त्रमर्थदम्।।५९।।

हे महेश्वर ! फलाहारी, जलाहारी, घी-आहारी, शहद आहारी, दूधाहारी होकर लोग, शुभ फल प्राप्ति के लिए आपकी अर्चना करते हैं । इसी प्रकार चतुर्थी के दिन भूखे-प्यासे रहकर सिर्फ वायु मात्र को पीने वाले लोग, अपने मन ही मन में महान् तत्त्व स्वरूप और धन सम्पत्ति प्रदान करने वाले गणेश जी के मंत्र का खूब जाप करते हैं ।।५९।।

अनेकजन्मपुण्यसञ्चयैस्त्वयीव मानवा:
दधत्यहो सदैकचित्तभक्तिभावनां मुदा
तदा तरन्ति दुस्तराद्भवाद्द्रुतं विनिश्चितं
जयोऽस्तु ते जयोऽस्तु ते गणेश्वर! त्वमाश्रय: ।।६०।।

जब अनेक जन्मों के पुण्य सञ्चित हो जाते हैं , तब जाकर मनुष्य की ऐसी बुद्धि बनती है, कि वह सब कुछ छोड़-छाड़ केवल अपने हृदय में भक्ति-भाव को धारण करता है, और फिर बिना प्रयास के ही आनन्दपूर्वक इस दुस्तर भवसागर से निश्चित ही तुरन्त पार उतर जाता है । हे गणेश्वर! आप ही मेरे आश्रय हो ! आपकी जय हो ! आपकी जय हो ।।६०।।

लज्जित: कामदेवश्च रूपाभया
चन्द्रमाश्चाननस्याभया येन वै
तेजसा कोटिसूर्याः परास्तास्तथा
तं भजामीशमज्ञानहं सौख्यदम् ।।६१।।

आपकी सुन्दरता की आभा देखकर कामदेव भी लज्जित हो जाता है । आपके मुख की छटा देख कर चन्द्रमा भी फीका पड़ जाता है । आपके तेज से करोड़ो सूर्य भी परास्त हो जाते हैं ! हे भगवन् ! आप मेरे अज्ञान को हर लो, और मुझे सुखी करो । मैं आपको भज रहा हूं ।।६१।।

यद्विधानं विधेस्तत्तु सत्यं ध्रुवं
तद्दुनोति क्वचिन्मादृशं हा जनं
किन्तु भक्तस्य कल्याणकाम: प्रभु:
नश्यतीव क्षणात्तं द्रुतं लोकनात् ।।६२।।

जो विधि का विधान है, वह अटल एवं सत्य होता है । और वह कभी-कभी मुझ जैसे मनुष्य को भी बहुत दुखी करता है । किन्तु हे प्रभु ! आप भक्तों के कल्याण करने वाले हैं । यदि आप एक बार दृष्टिपात भी कर दें, तो वह दुर्भाग्य भी एक क्षण में ही तुरन्त नष्ट हो जाता है, ऐसी आप की महिमा है ।।६२।।

किन्न गौरीसुतेनेह संसाध्यते
किङ्गजास्येन नैवेह निर्मीयते
किश्च गुप्तं गणेशस्य दृष्ट्याऽस्ति वा
नैव किञ्चिन्न किञ्चिन्न किञ्चित्प्रभो ।।६३।।

ऐसा क्या है, जो पार्वती के पुत्र गणेश जी सिद्ध नहीं कर सकते? ऐसी कौनसी वस्तु है, जिसको गणेश जी निर्माण नहीं करते? अरे! उन गणेश की दृष्टि से क्या छुपा हुआ है? कुछ नहीं ! कुछ नहीं ! कुछ भी नहीं ।।६३।।

किन्न दद्यात्स लम्बोदरो मोदित:
किन्न पुष्णाति कामान् जनैरर्चितो
वृद्धया श्रद्धया यो भजेद्विघ्नहं
मृत्युराजोऽपि तं नैव दृष्टुं क्षम:।।६४।।

वे लम्बोदर यदि प्रसन्न हों, तो क्या क्या नहीं दे सकते? किस इच्छा को पूरी नहीं कर सकते? अगर उनकी विधि-विधान से पूजा की जाए और खूब बढ़ी हुई श्रद्धा से जो मनुष्य विघ्नों के हरने वाले भगवान का भजन करते हैं, मृत्यु के राजा यमराज भी उनकी तरफ आंख उठाकर नहीं देख सकते। (उनकी तरफ दृष्टि नहीं डाल सकते।) ।।६४।।

हे हिमाढ्ये प्रदेशे क्वचित्त्वं वसे:!
श्रीसुधास्नाविलोके क्वचित्त्वं वसे:!
यत्र सर्वं विनिश्चीयते प्राणिनां!
त्वं तु तस्मादपीशोत्तरे[19] संवसेः ।।६५।।

भगवन् ! आप कहीं बर्फीले प्रदेशों में रहते हैं ! आप जिस लोक में रहते हैं, वहां अमृत बरसता रहता है ! और जहां प्राणियों के बारे में सब कुछ सब कुछ निश्चित किया जाता है, भगवन्! आप तो उससे भी ऊपर के लोक में निवास करते हैं ।।६५।।

स्वर्णमूर्त्तौ क्वचिद्राजते संवसे:
ताम्रकांस्यादिषु त्वं वसे: सीसके
काष्ठपाषाणमृद्-गोमयेष्वायसे[20]
नैव पश्यामि तद्यत्र न त्वं वसे: ।।६६।।

कहीं आप सोने की मूर्ति में स्थित रहते हो ! कहीं चांदी की कहीं तांबे, कांस्य और शीशे, कहीं लोहे की मूर्ति में भी आप की प्राण प्रतिष्ठा होती है । कहीं लकड़ी की मूर्ति में आपको आवाहित किया जाता है, और पत्थर की, मिट्टी की, गोबर की मूर्ति में भी भक्त लोग आप की प्राण-प्रतिष्ठा करते हैं । लेकिन मैं तो ऐसी कोई जगह ही नहीं देखता जहाँ आप न रहते हों ।।६६।।

खाग्निवाय्वब्धराकालदिग्-राजित!
त्वं मनश्चेतनास्वात्मनि भ्राजित:
हार्दिकोद्गार! सत्यस्त्रिकालेष्वसि
क्वासि न त्वं,गणेशा!ऽखिलात्मन्! प्रिय! ।।६७।।

आकाश अग्नि वायु जल धरती, काल, दिशा - इन सातों पदार्थों में आप ही विराजमान हैं । मन की विभिन्न चेतनाओं में और स्वयं आत्मा में भी आप ही विराजते हैं । अरे, आप तो वास्तव में हृदय के सच्चे उद्गार हैं ! और तीनों कालों में सत्य हैं ! आप कहां नहीं हैं ? हे प्रिय गणेश! आप तो अखिलात्मा हैं ।।६७।।

चन्द्रभालोऽहिमालो मया कल्पितो
वक्रतुण्डस्त्रिपुण्ड्रेण संशोभितो
व्याघ्रचर्माम्बरो रुद्रमालाधरश्-
शम्भुरूपस्त्रिशूलं धरन् नम्यते।।६८।।

त्रिपुण्ड्र लगाए हुए, मस्तक पर चन्द्रमा धारण किए हुए, साँपों की माला पहने हुए, बाघ का चर्म लपेटे हुए, रुद्राक्ष की माला धरे हुए, और त्रिशूल हाथ में लिए हुए, साक्षात् शिव के ही स्वरूप को धारण करते हुए , भगवान् वक्रतुण्ड की मैंने कल्पना की है । मैं उन्हें नमस्कार करता हूं ।।६८।।

शेषनागे शयानश्च पीताम्बरो
नीलदेहोऽम्बुधौ ऋद्धिसिद्ध्यन्वितश्-
चक्रपाणि: गदापद्महस्तोऽभयं
यच्छतीवेति विष्णुर्गणेशो मम ।।६९।।

पीताम्बर धारण किए हुए, आकाश के जैसे नीले शरीर की कान्ति वाले, ऋद्धि-सिद्धि के साथ क्षीर-सागर में शेषनाग पर सोते हुए, हाथ में चक्र, गदा, कमल और अभय-मुद्रा को धारण करने वाले वे गणेशजी, विष्णु के रूप में मैंने देखे ! वे हमें अभय प्रदान करें ।।६९।।

सर्वदेवात्मकोऽहो गणेशो गुरुर्-
भाव्यते श्रद्धया हार्दनीलाम्बरे
तेन सर्वत्र यश्चैकदन्तं विभुं
पश्यति, प्राप्नुते तेन किन्नात्र वै ।।७०।।

भगवान् गणेश तो सभी देवताओं में समाहित हैं ! सभी देवता गणेश के ही स्वरुप हैं ! वही गुरु हैं ! वरिष्ठ हैं ! अपने हृदय रूपी नीले आकाश में, मैं श्रद्धा पूर्वक उनको ही देखता हूं । इसी प्रकार सब जगह जो एकदन्त, विभु, सर्वव्यापी, परमात्मा को देखता है, भगवान् गणेश उसे क्या नहीं दे सकते? अर्थात् सब कुछ दे सकते हैं ।।७०।।

पार्श्वेऽसीव ममैवासि चात्मन्येव सदा वसन् ।
त्वं तनोषि शिवं सद्यस्त्वं दुनोषि रिपून् मम ।।७१।।

आप मेरे पास ही हैं , आप मेरे ही हैं, मेरी आत्मा में ही वास करते हैं करते हुए कल्याण प्रदान करते हैं ! और हे भगवन् ! मेरे शत्रुओं को पीड़ा दो (समाप्त करो।) ।।७१।।

म्लेच्छान्धूर्तान्मदान्धाँश्च श्रीगणेश! मम द्विष:!
जहि स्वभक्तकष्टाँश्च कोऽस्ति मेऽन्यस्त्वया विना ।।७२।।

म्लेच्छ, धूर्त, अभिमान में अंधे, जो मेरे से द्वेष करने वाले शत्रु है, उनको आप मार डालो ! हे गणेश जी! वे आपके भक्तों को कष्ट पहुंचाने वाले हैं । आपके सिवा दूसरा मेरा कौन है? कोई नहीं ।।७२।।

अहम्मूर्खोऽपि दुष्टोऽपि त्वद्भक्त्या रहितोऽस्म्यपि ।
किन्तु तेऽस्मीति भावेन मामुद्धारय विघ्नराट् ।।७३।।

मैं यद्यपि मूर्ख हूं, दुष्ट हूं, और आपकी भक्ति से रहित हूं ! किन्तु फिर भी आपका हूं - ऐसा सोचकर, हे विघ्नराज ! मेरा उद्धार करो ।।७३।।

हे गणेश! त्वया सृष्टं त्वया सम्पालितं हृतम् ।
जगदेतत् त्वदर्चाभिर्भवेन्नूनं सुरक्षितम् ।।७४।।

हे गणेशजी ! आपने ही इस संसार की रचना की है, आप ही इसका पालन पोषण करते हो, और आप ही इसका विनाश करते हो (अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी आप ही हैं ।) । आपकी पूजा-अर्चना करने से यह संसार निश्चित रूप से सुरक्षित होता है ।।७४।।

शाकेष्वन्नेषु पेयेषु गेये ध्येये प्रमेयके ।
शाखापत्रेषु वृक्षेषु कोऽन्यो वर्त्तेस्त्वया विना ।।७५।।

शाकों में, अन्नों में, पेय-पदार्थों में, गेय-गीतों में, ध्येय तत्त्व में, प्रमेय वस्तु में, हरेक शाखा में, पत्ते-पत्ते में, आपको छोड़ कौन दूसरा है, जो रहता हो ! अर्थात् आप ही इन सब में निवास करते हैं ।।७५।।

शय्यास्थ: पुस्तकस्थस्त्वं नारस्थो वा नरस्थित:!
हरिस्थस्त्वं हरस्थस्त्वं विधिस्थ: कस्त्वया विना ।।७६।।

शैय्या, पुस्तक, जल, मनुष्य, विष्णु, शिव , ब्रह्मा, इन सब में भी अन्दरूनी रूप (अथवा सर्वात्मकत्त्वात्) से आप ही विद्यमान हैं , कोई दूसरा नहीं ।।७६।।

अहं किञ्चिन्नास्मि श्रुतिवर! तवासक्तिरहितो
पुनः किं जीवानि प्रतिदिनमहो जप्यरहितो
म्रियै नूनं जीवन्, तव विमलदृष्ट्या विरहितो
ह्यतो हे देवाग्रार्चन! भव दयालुर्मम कृते ।।७७।।

हे वेदों के श्रेष्ठ देव! आपकी भक्ति से रहित, मैं कुछ भी नहीं ! आपका नाम-मंत्र-जप किए बिना, मैं प्रतिदिन क्यों जी रहा हूं? (अर्थात् आपके मन्त्र-जप के बिना जीवन ही व्यर्थ है) ! आपकी विमल-दृष्टि से जो नहीं निहारा गया, वह जीता हुआ भी मृतक है । इसलिए देवताओं में प्रथम पूज्य ! आप मुझ पर भी कृपा करें ।।७७।।

पुण्यैश्च कैश्चित् सुरराडहं वा
समालभै मानवजन्म भूम्यां
पुनः पतेयं न जगद्भयेऽस्मिन्
स्मराम्यतस्त्वां भवनाशमूलम् ।।७८।।

हे भगवन् ! किन्हीं पुण्यों से मैंने यह मानव-जन्म इस धरती पर प्राप्त किया है । लेकिन दोबारा इस भयङ्कर संसार में न गिर जाऊं, इसलिए आपका मैं स्मरण कर रहा हूं, क्योंकि भव-बन्धन को नाश करने वाले मूल स्वरूप आप ही हैं ।।७८।।

बन्ध: क्षुधा पीडनमारणानि
हा यातना छेदनकर्तनानि
क्लेशो महान् पाशवजन्मवत्सु
पाहि प्रभो मां भवबन्धनेभ्य:।।७९।।

बन्धन, भूख, प्यास, पीड़ा , यातना ,काटना, पीटना और अन्त में मार देना ! हा, कितना महाकष्ट है, पशु योनि में जन्म लेने वालों को ! हे प्रभु ! मुझे इस जन्म-रूपी बन्धन से छुड़ाइए ! आपके लिए नमस्कार है ।।७९।।

न वा कुरङ्गे नहि वा मतङ्गे
न मे गतिस्स्यादथवा पतङ्गे
न मानवाङ्गे न हि जीवताङ्गे[21]
गजाननाङ्गे मतिरस्तु दन्तिन् ।।८०।।

हिरण, हाथी, कीट-पतङ्गा, मनुष्य, जीव-स्वरूप, इनमें मैं कोई गति नहीं चाहता । न इन में ध्यान लगाना चाहता । लेकिन हे गजानन! आपके ही स्वरूप में अपनी बुद्धि को लगाना चाहता हूं! दन्ती महाराज! आपकी जय हो ।।८०।।

का वार्ताऽन्यसुरस्य चेद्भवति ते श्रद्धाऽथ सिद्धीश्वरे
का गाथाऽन्यगुणस्य चेद्भवति ते निष्ठा शुभर्द्धीश्वरे
का विद्याऽन्यतमा भवेदथ च ते बुद्धिर्हि बुद्धीश्वरे
का शक्तिस्त्वितरा भवेद्यदि गुरौ भक्तिश्च शक्तीश्वरे ।।८१।।

और दूसरे देवताओं की बात ही क्या करना, जब स्वयं सिद्धीश्वर में आपकी श्रद्धा है ! दूसरे देवताओं के गुणों को गाना ही क्या, जब शुभकारी-ऋद्धीश्वर की गाथा गाने में आपकी निष्ठा है ! दूसरी किसी विद्या में अपनी बुद्धि को लगाना ही क्या, जब बुद्धीश्वर में ही अपनी बुद्धि को लगा दिया हो, और दूसरी शक्तियों को एकत्रित करना ही क्या, जब शक्तीश्वर गुरु में ही आपकी भक्ति जागृत हो गई हो ।।८१।।

गिरीशे वा गिरीशे वा गीरीशे वा गवीश्वरे ।
गोत्रेशे वा गुणेशे वा गणेशो दृश्यते मया[22] ।।८२।।

हिमालय में, हिमालय पर सोने वाले शङ्कर भगवान में, वाणी के स्वामी बृहस्पति में, गायों के स्वामी कृष्ण में, गोत्रों के ऋषियों में, (सत्त्वादि) गुणप्रधान देवताओं में, हर जगह मैंने गणेश को ही देखा ।।८२।।

सूरेशे वा सुरेशे वा शूरेशे सारिकेश्वरे ।
राशीशे वा सुरर्षौ वा सर्वेशश्श्रीयते मया ।।८३।।

विद्वानों के स्वामी में, देवताओं के स्वामी में, वीरश्रेष्ठ में, सारिकारूपी स्त्रियों के स्वामी में, राशियों के स्वामी में, देवर्षि नारद में, सब के स्वामी, भगवान् गणेश को ही मैंने श्रयण (सेवन) किया ।।८३।।

श्रीश्वरे धीश्वरे विष्णौ जिष्णौ कृष्णे कृपाकरे।
ऋद्धिसिद्धीश्वरो दृष्टो गरुडे वरुणेऽरुणे ।।८४।।

लक्ष्मी और शोभा के ईश्वर विष्णु में, बुद्धि के ईश्वर में, इन्द्र में, कृपानिधान कृष्ण में, पक्षिराज गरुड़ में , जल के देवता वरुण में, और अरुण में, मैंने ऋद्धि-सिद्धि के ईश्वर, गणेश जी को ही देखा ।।८४।।

वेदान्ते चापि साङ्ख्ये वा न्याये वैशेषिकेऽपि वा ।
यत्परं तत्त्वमुद्दिष्टं गणेशो मन्यते मया ।।८५।।

वेदान्त, साङ्ख्य, न्याय और वैशेषिक जो शास्त्र हैं, उनमें जिस परम् तत्व को उद्दिष्ट किया गया है (परम् तत्त्व कहा है), उस परम् तत्त्व को, मैं गणेश ही मानता हूं ।।८५।।

गणयेन्न गुणान् पुंसां दोषाँश्चैव कदाचन ।
स्वभक्तिसक्तिचित्तानां गणेशो गीर्यते मया ।।८६।।

जिन मनुष्यों के मन, भगवान् गणेश की भक्ति में ही आसक्त रहते हैं, ऐसे भक्तों के गुण-दोषों को देखे बिना ही, भगवान् उन्हें मुक्ति प्रदान करते हैं ! उन गणेश भगवान् का ही मैं भजन-कीर्तन करता हूं ।।८६।।

क्व विघ्नाः क्व भवेद्भीतिः क्व रोगाः क्व महापदाः!
सिद्ध्यन्ति सर्वकार्याणि गणेशस्यैव पूजया ।।८७।।

कहां विघ्न? कहां डर? कहां रोग? कहां आपत्तियां?
ये कोई नहीं पास आता! यह सब नष्ट हो जाते हैं ! और सब काम सिद्ध हो जाते हैं, सिर्फ गणेश जी की ही पूजा से ।।८७।।

महायुद्धे स्मरेत्तं वै गजास्यं त्र्यक्षिकं सदा।
गदाशूलाऽङ्कुशाऽभीतिहस्तं, त्रस्तीकरोत्यरीन् ।।८८।।

यदि कोई, तीन नेत्र वाले, हाथ में गदा, शूल, अङ्कुश और अभय धारण करने वाले, गजमुख भगवान् का यदि ध्यान करता है , तो वह महायुद्ध में अपने शत्रुओं को निश्चित रूप से त्रस्त (दुखी) कर देता है ।।८८।।

लोकेऽस्मिन् भ्राजितो भक्त्या विघ्नराजस्य यो नरः।
नरा नागा न गन्धर्वा यक्षा विघ्नन्ति तं भयात् ।।८९।।

इस संसार में जो कोई भी, विघ्नराज की भक्ति से शोभायमान होता है,उसके कार्य में मनुष्य, सर्प, गन्धर्व, यक्ष, भी डर के मारे विघ्न नहीं डालते ।।८९।।

वेताला दासतां यान्ति कूष्माण्डैर्न निरुध्यते ।
ब्रह्माण्डेऽव्याहतो भूत्त्वा भ्रमेद् दन्तिदयाश्रित:।।९०।।

बेताल उसके वश में हो जाते हैं, कूष्माण्ड[23] उसको रोक नहीं पाते , इस सारे ब्रह्मांड में वह बिना रोक-टोक के घूमता है , जो मनुष्य, दन्तिराज की दया के आश्रित हो जाता है ।।९०।।

शूर्पकर्णं चतुर्हस्तं कृष्णदेहं क्वचिच्च तम् ।
मूषकेन भ्रमन्तं यो ध्यायेन्मृत्युं पराजयेत् ।।९१।।

शूर्प के जैसे उनके कान है ! उनके चार हाथ हैं ! और काले रंग का शरीर है, और चूहे पर चढ़कर घूमते रहते हैं, गणेशजी के ऐसे स्वरूप को जो ध्यान करता है, वह मृत्यु को भी पराजित कर देता है ।।९१।।

हिमांशुर्गौडविप्रोऽसौ पर्शुहस्तं द्विजप्रियम् ।
भावयेद्दुष्टहन्तारं चात्मकल्याणहेतवे ।।९२।।

यह ब्राह्मण हिमांशु गौड़, फरसा हाथ में लिए हुए, ब्राह्मणों को प्रेम करने वाले, दुष्टों को मारने वाले, उन्हीं गणेश भगवान् का अपने कल्याण की कामना से ध्यान करता है ।।९२।।

हिमांशुरश्मिशीतलं सुधांशुरूपकाननं
हिमांशुरत्नमस्तकं महास्त्रशस्त्रहस्तकं
हिमांशुगौडसुस्तुतं समस्तदेवतानुतं
महाप्रभांशुकोटितेजसं भजे गजाननम् ।।९३।।

चन्द्रमा की किरणों के समान जो शीतल हैं ! अमृतमयी किरणों का रूपक, जिनका मुखमंडल है ! द्वितीया के चन्द्रमा को जो मस्तक पर धारण करते हैं ! महान् अस्त्र शस्त्रों को हाथों में धारण करते हैं, हिमांशुगौड़ नामक इस ब्राह्मण के भी प्रणम्य हैं, सभी देवता जिन्हें प्रणाम करते हैं ! करोड़ों सूर्यों के समान तेज वाले हैं, उन गजानन भगवान् का मैं भजन करता हूं ।।९३।।

हे श्रीगणेश! भवतो हि बहुत्र लोके
श्रद्धादिभावशरणाश्शतशो मनुष्या:
मा विस्मरे: द्विजमिमं शिवभक्तिसक्तं
चास्मिन्महाजनपदे तृणवत्, तवाहम् ।।९४।।

हे श्रीगणेश ! इस संसार में बहुतेरे स्थानों पर, श्रद्धा आदि भावों से आपकी शरण में सैकड़ों लोग आते हैं । किन्तु मैं शिव (गणेश) की भक्ति में आसक्त हूं ! मुझे आप भूल न जाना ! जनता के इस महा-समुदाय में, मैं तो तिनके के समान तुच्छ हूं, फिर भी सिर्फ आपका हूं ।।९४।।

शास्त्राचारविचारशून्यगतिकोऽहोऽहं क्व यानि प्रभो!
देवार्चापरिवर्जितोऽस्मि बहुधा चाऽऽलस्यचित्तोऽस्म्यपि
वारम्वारमहस्सु वा कपटतादक्षैः विभो! पीडितस्-
त्वं चेत्पश्यसि न, प्रयाणि भगवन्! कुत्रेति नो वेद्म्यहम् ।।९५।।

शास्त्रों के आचार विचार से शून्य गति वाला, मैं आपको छोड़कर कहां जाऊं ! देवताओं की पूजा-अर्चना से विहीन मैं अधिकतर आलस्यचित्त वाला ही हूं । हे भगवन् ! मैं बार-बार कपटी जनों से पीड़ित हुआ हूं, छला गया हूं ! प्रभु ! यदि आप ही मुझे नहीं देखेंगे, तो मैं कहां जाऊंगा, ये मैं कुछ नहीं जानता ।।९५।।

अश्रूणां गिरयैव हेऽङ्कुशकर! त्वं वै दयालुर्द्रुतं
भूत्वा नो प्रददाति किं भुवि जनान् नाकेऽथवा देवताः
सर्वे ते प्रणताः हि जीवनधराः कल्याणतां यान्त्यपि
किं वाऽहं कथयानि चाऽधिकमहो माहात्म्येतत् शिव ।।९६।।

हे अङ्कुशहस्त! आप केवल आंसुओं की भाषा ही समझते हो! और तुरन्त दयालु होकर इस संसार में मनुष्य को, और स्वर्ग में देवताओं को क्या-क्या नहीं प्रदान कर देते? और वे सभी जीव आपके प्रति नमस्कार-पूर्वक अञ्जलि बान्धकर कल्याण को प्राप्त करते हैं । हे शिव! मैं अधिक क्या कहूं? आपका महत्त्व तो बहुत अधिक है ।।९६।।

कुटिलैर्नैव लभ्योऽसि न च्छलापन्नमानसैः ।
सरलैस्त्वं प्रसन्नस्स्याः दद्यास्सञ्चिन्तितं फलम् ।।९७।।

भगवन्! आप कभी भी कुटिल और छल भरे हुए मन वाले लोगों द्वारा प्राप्त नहीं किए जा सकते ! और ना ही प्रसन्न हो सकते ! आप केवल सीधे-साधे, सरल व्यक्तियों से ही प्रसन्न होते हो, और उन्हें मन-इच्छित फल को देते हो ।।९७।।

श्रद्धा मे तव गुण्यगौरवकथागानेऽधुना दन्तिराट्
पुण्यैरेव समुद्भवाऽस्ति सुरराट् त्वत्पादुकापूजने
बालोऽहं त्विति संविचिन्त्य सहतां सर्वापराधान् मम
संसारात्तमिमं न ते सुरभिता मां सन्त्यजेत् कर्हिचित् ।।९८।।

हे सुराधिपति! आज जो आपके गुणों के गौरव की कथा गाने में, और आपकी चरणपादुका पूजने में, मेरी श्रद्धा उत्पन्न हुई है, मैं मानता हूं कि वह पुण्य से ही हुई है। मैं तो आपका बालक ही हूं, ऐसा मानकर आप मेरे सभी अपराधों को क्षमा (सहन) करो ! और संसार में फंसे हुए मुझको आपके स्वरूप की सुगन्धि कभी भी न त्यागे, ऐसी कृपा करो ।।९८।।

विलोक्य यं गणेश्वरं शताः हृदीव भान्ति मे
दिवप्रदायिशोकहायिशैवलोककल्पनाः
धृतीश्वरं जयेश्वरं मखेश्वरं रणेश्वरं
द्विजेश्वरं शुभेश्वरं भजामि कामिनीश्वरम् ।।९९।।

जिन गणेश्वर को देखकर, मेरे हृदय में स्वर्ग देने वाली, शोक नष्ट करने वाली, शैव (कल्याणमय) लोक की कल्पना उद्भासित होने लगती हैं, उन धृति के स्वामी, जय के ईश्वर, यज्ञों के ईश्वर, युद्धों के ईश्वर, द्विजों के ईश्वर , और शुभ रूपी ऐश्वर्य को धारण करने वाले, कामिनीश्वर, गणेश का मैं भजन करता हूं ।।९९।।

महाविपद्विनाशनं सुभाग्यभातभावकं
युगान्तवह्निदग्धलोकभक्तमोक्षदायकं
सुरेड्यपीडनान्तकं[24] सदीडितं सदेडितं[25]
मृडेडितं हृदेडितं शतैर्नमामि पद्यकैः ।।१००।।

महाविपत्ति का विनाश करने वाले! सौभाग्य की प्रभा का भाव पैदा करने वाले! प्रलय की अग्नि में जलते हुए संसार से, भक्तों को मोक्ष देने वाले! देवताओं को पूजने वाले श्रद्धालुओं की पीड़ा का अंत करने वाले! सज्जनों से वन्दित और सर्वदा पूज्य! शिव से भी पूजित! और सच्चे हृदय से जो पूजित होते हैं, मैं उनको सौ पद्य श्लोकों से प्रणाम करता हूं ।।१००।।

श्रीटीकारामपौत्रेण श्रीमप्रमोदात्मजेन च ।
श्रीबाबागुरुशिष्येण श्रीगणेशशती कृता ।।

पण्डित टीकारामशास्त्री के पौत्र प्रमोदशर्मा के पुत्र एवं श्रीबाबागुरुजी के शिष्य आचार्यहिमांशुगौड़ ने यह गणेशशतक लिखा ।

श्रीमद्गणनाथो विजयते ।।

।।श्री गणनाथ की जय हो ।।

।। इति श्रीमत्पण्डितटीकारामशर्मपौत्रेण प्रमोदशर्मात्मजेन श्रीमद्बाबागुरुशिष्येणाचार्यहिमांशुगौडेन कृतं श्रीगणेशशतकं सम्पूर्णम् ।।

।। डॉ.हिमांशुगौडस्य संस्कृतकाव्यरचनाः ।।		
१	श्रीगणेशशतकम्	(गणेशभक्तिभृतं काव्यम्)
२	सूर्यशतकम्	(सूर्यवन्दनपरं काव्यम्)
३	पितृशतकम्	(पितृश्रद्धानिरूपकं काव्यम्)
४	मित्रशतकम्	(मित्रसम्बन्धे विविधभावसमन्वितं काव्यम्)
५	श्रीबाबागुरुशतकम्	(श्रीबाबागुरुगुणवन्दनपरं शतश्लोकात्मकं काव्यम्)
६	भावश्रीः	(पत्रकाव्यसङ्ग्रहः)
७	वन्द्यश्रीः	(वन्दनाभिनन्दनादिकाव्यसङ्ग्रहः)
८	काव्यश्रीः	(बहुविधकवितासङ्ग्रहः)
९	भारतं भव्यभूमिः	(भारतभक्तिसंयुतं काव्यम्)
१०	दूर्वाशतकम्	(दूर्वामाश्रित्य विविधविचारसंवलितं शतश्लोकात्मकं काव्यम्)
११	नरवरभूमिः	(नरवरभूमिमहिमख्यापकं खण्डकाव्यम्)
१२	नरवरगाथा	(पञ्चकाण्डान्वितं काव्यम्)
१३	नारवरी	(नरवरस्य विविधदृश्यविचारवर्णकं काव्यम्)
१४	दिव्यन्धरशतकम्	(काल्पनिकनायकस्य गुणौजस्समन्वितं काव्यम्)
१५	कल्पनाकारशतकम्	(कल्पनाकारचित्रकल्पनामोदवर्णकम्)
१६	कलिकामकेलिः	(कलौ कामनृत्यवर्णकं काव्यम्)

श्रीरामशम्भुसदनानि तथैव चण्डी-
सन्मन्दिरं त्विह जनैः परिनिर्मितञ्च
नैवाधिकाय दधतीव कदापि चित्तं
स्वल्पेन तुष्टमनसा सुखमाव्रजन्ति ।।

सप्तप्रजातय इह प्रवसन्ति हिन्दोः

कालक्रमेत्र यवनाश्च गृहाणि कृत्वा

अन्नालयो वापि धनालयो वा शाकस्य मण्डी
जातो बहादुरगढे
भ्रातृत्रयकनिष्ठो यो चतुस्स्वस्रग्रजश्च यः।
लब्धं नारवरे गङ्गातीरे शास्त्रं पदादिकम् ।।
श्रीश्यामसुन्दराख्याच्च शर्मणो दिव्यकर्मणः ।
गोविप्रमखासक्ताच्छास्त्रचित्ताच्छिवप्रियात् ।।

चायप्रियो हिमांशुर्यो गानसंसक्तमानसः।
स्वाभिमानी विनम्रश्च चाटुवाक्यविवर्जितः।।
प्रकृतिप्रिय एवासौ कार्त्रिमं परिवर्जयेत् ।
आत्मप्रशंसने नैव चातुर्यं सन्दधात्यहो ।।
द्विड्भ्यः क्रुध्यति सद्ध्यश्च द्रुतमेष प्रसीदति ।
सरलं यापयेज्जीव्यं चानाडम्बरवर्तितः।।
चित्तं स्याज्झङ्कृतं यस्य रागिनीगीतझङ्कृता।
कल्पनालोकगामी च शिवचिन्तनसंयुतः।।
रसप्रियो रसाढ्यश्च रसविद्रसिकप्रियः।
सरस्तीरे भ्रमन् पश्येद् हरिन्नीरेण मोदितः ।।

---

[1] देवताओं को धर्म एवं दैत्यों को अधर्म सम्बन्धि युद्ध की प्रवृत्ति (केन) किस तत्त्व के द्वारा होती है ।

[2] सत्सङ्ग हरिभजन एवं मुक्तिप्रयत्न ही वास्तविक बुद्धिमानी है , इससे अतिरिक्त केवल सांसारिक कार्यों में ही उलझकर अपने जीवन को नष्ट करना मूर्खता ।

[3] श्रीश्रीश्रीगणनाथदेवदयया दृष्टास्स्थ पुण्यश्चराः।। इति पा.

[4] यो वै धूम्रजटाधरस्य तनयो गौरीसुतो यः प्रभुर्-
विघ्नध्वंसकरश्च यश्च भगवान् आपद्गतान् पाति यो
दारिद्र्य दहति क्षणात् स्तुतिकृतां श्रद्धाश्रितानां नृणाम्
तं वै लोकचमत्कृतं च सततं लम्बोदरं भावये ।। इति पा.

[5] प्रावाहयेद्बुद्धिधृत् इति पाठान्तरम्

[6] त्रियां - स्त्रियं ददातीति।

[7] पाणिनिकात्यायनपतञ्जलिभिरर्चितमित्यर्थः ।

[8] चातुरीभिः जगद्रूपं चित्रं करोतीति , चातुरीणां चित्रणं करोतीति वा ।

[9] चमत्कारपूर्णो लोको यस्य , चमत्कर्तुं तच्छीलः यस्य लोकस्य (दर्शनस्य) इत्यर्थोपि लब्धुं शक्यते ।

[10] भ्रामरी इत्याख्यविद्याया ईशस्तमित्यर्थः ।

[11] केशय इति। के जले शेते केशयो यद्यपि विष्णुस्तथापि गणेशस्यैवात्र सर्वात्मकत्त्वात्तस्यैव केशयरूपकल्पना कृता । अपि च विष्णुस्तु सागरे शेते, कविनाऽत्र सरोवरस्थे कूपस्थे नदीस्थे वा सर्वत्र जले, शेते यो गणेशस्तादृशस्य चित्रमत्रोदभावि ।

[12] रागिनीनां सङ्गीतलहरीविशिष्टानामीशस्तं, सर्वाः सङ्गीतादिविद्याः गणेशतो लभ्या इति शास्त्रेण रागिनीश इति वचनमवोच्यत्र कविना ।

[13] शिवं कल्याणरूपं , अपि च आत्मा वै जायते पुत्र इति विचिन्त्य गणेशोपि शिव एव ।

[14] कार्तिकेयस्य अग्रजः अग्रतो जातः । शम्भोः पुत्रः । शिवः कल्याणरूपः । स्वयमपि स्वपितुश्शिवस्याराधकः । स्ववाहने मूषके राजितः । पीतानि वस्त्राणि यस्य तद्धारकः । शस्त्रैस्सह सशस्त्रः , अङ्कुशपाशप्रभृतीनि शस्त्राणि । गुरुः लोकस्येति शेषः । गुण्यश्चासौ पुण्यश्च उभयोर्करूपतयात्र गणेशो गुण्यपुण्यः । गिरां वेदादिगिराम् , अपि च यावज्जीवति स्वकल्याणार्थं जीवैराश्रिताः गिरस्तासामेकमात्रं लभ्यं, अर्थात् सर्वेषामेकलभ्यो गणेश एव ब्रह्मरूपः । तं नुमः वन्दामहे ।

[15] जल जैसे नया ताज़ा बहुत शीतलता और ताज़गी देता है ऐसी नवनवोन्मेष-प्रतिभाशालिनी एवं प्रसन्नबुद्धि ।

[16] गणेशजी का ही एक नाम शिव भी है । शिव ही सबके राजा हैं इसलिए यहाँ गणेशजी का नाम शिवराज – यह कहा गया है ।

[17] सोऽर्चिस्स्वरूपो गणेशो लौहस्थोऽपि बलतायाः दानं श्रयति भक्तायेत्यर्थः ।

[18] भगवान् को वैसे तो कुछ नहीं चाहिए, क्योंकि सब वस्तुओं के निर्माता वे ही हैं। यह अमुकामुक वस्तु चढाने का विधान तो मनुष्य की देवताओं में निष्ठा बढाने के लिए है। कुछ लोग सामर्थ्य होते हुए भी देवपूजा में लोभ करते हैं तथा कोई असमर्थ होते हुए भी उदार भाव से पूजन-सामग्री समर्पित करता है। जैसे विष्णु भगवान् द्वारा जब एक सहस्र कमलपुष्पों से शिवजी की पूजा के समय शिव ने परीक्षा हेतु एक कमल चुरा लिया था , तब महान् भक्ति के कारण विष्णु ने अपनी आँख (कमलनयन होने के कारण) ही निकालकर समर्पित करनी चाही, ती शिव ने प्रसन्न हो उन्हें सुदर्शन चक्र दिया। अर्थात् भगवान् को किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं। ये तो केवल भक्तों के मन की श्रद्धा है।

[19] (तस्माद् अपि ईश उत्तरे = उच्चतरे स्थाने संवसेरित्यर्थ:)

[20] (गोमयेषु आयसे - अयस इदं आयसं लौहमयं तत्र इत्यर्थ:)

[21] जीवतायाः कस्मिंश्चिदपि अङ्गे न मे मती रतिर्वास्ति।

[22] (गिरीश - शिव, गिरीश - हिमालय, गीरीश - बृहस्पति, गवीश्वर- कृष्ण, गोत्रेश - ब्राह्मण, गुणेश- गुणवान् व्यक्ति)

[23] ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डाः भैरवादयः – ये सब देवयोनिविशेष हैं।

[24] सुरा ईड्याः येषान्ते सुरेड्यास्तेषाम्पीडनं तस्य पीडनस्यान्तकं गणेशमित्यर्थः।

[25] सदीडितं - सद्भिरीडितं, सदेडितं – सदा ईडितम् इति द्विधा प्रोक्तम्।